B.A. I (Hon's)
Paper - Ist Topic - Mimansa - Theory of error

प्र: मीमांसा के भ्रम-विषयक सिद्धान्त की व्याख्या करें।
Give an account of the Mimansa theory of error?

Ans:→ भारतीय दर्शन में भ्रम की व्याख्या एक महत्त्वपूर्ण समस्या के रूप में रही है। न्याय दर्शन भी भ्रम ज्ञान को स्वीकार करता है, परन्तु इसे अयथार्थ-ज्ञान मानता है। अयथार्थ-ज्ञान को अप्रमा तथा यथार्थ-ज्ञान को प्रमा कहा जाता है। यथार्थ अनुभव किसी वस्तु का उसी रूप में ज्ञान है, यही कारण है कि यथार्थ ज्ञान को 'सत्योपलब्धि' कहा जाता है। रस्सी को रस्सी के रूप में और सर्प को सर्प के रूप में अनुभव या ज्ञान यथार्थ या प्रमा है। अयथार्थ अनुभव या भ्रम किसी वस्तु का अपने से भिन्न रूप में ज्ञान है, यही कारण है कि भ्रम को 'मिथ्योपलब्धि' माना गया है। जैसे- रस्सी को सर्प के रूप में या सर्प को रस्सी के रूप में ज्ञान भ्रम ज्ञान है। यह स्पष्ट है कि यह भ्रम ज्ञान यथार्थ ज्ञान का विरोधी है। भ्रम ज्ञान या विपरीत ज्ञान की सत्ता को प्रायः सभी भारतीय दार्शनिक मानते है। मीमांसा- दर्शन में भी भ्रम की समस्या की व्याख्या एक महत्त्वपूर्ण समस्या के रूप में रही है क्योंकि मीमांसा- दर्शन ज्ञानशास्त्रीय सिद्धान्त के रूप में स्वतः प्रामाण्यवाद को स्वीकार करता है। जिसके अनुसार प्रत्येक ज्ञान अपने- आप में यथार्थ होता है। इसकी यथार्थता किसी अन्य पर आश्रित नहीं है। कुमारिल तथा प्रभाकर मीमांसा- दर्शन के बहुत बड़े अनुयायी माने जाते है और इन दोनों ने भी स्वतः प्रामाण्यवाद में विश्वास किया है। प्रभाकर ने कहा है →

All Cognitions as Cognitions are Vaid, their invalidity is due to their disagreement with the real nature of the Objects." ठीक इसी प्रकार की बात कुमारिल ने भी कहा है, इनके अनुसार "The Validity of knowledge consists in its apprehending an object it is not a side by such discrepancies as its disagreement with the real nature of the object."

इसप्रकार यह स्पष्ट है कि प्रभाकर तथा कुमारिल दोनों ही ज्ञान को अपने आप में यथार्थ मानते है। प्रभाकर का विचार "त्रिपुटी प्रत्यक्षवाद" तथा कुमारिल का विचार "ज्ञाततावाद" की संज्ञा दी गई है। लेकिन प्रश्न है कि सभी के सभी ज्ञान अपने आप में यथार्थ होते है, तो फिर भ्रम की व्याख्या कैसे की जा सकती है? भ्रम की अवस्था में हम अयथार्थ पदार्थ

Scanned with CamScanner

की यथार्थ मान बैठते हैं। इन दोनों ने भ्रम की व्याख्या भिन्न-भिन्न ढंग से दी है। प्रभाकर का भ्रम-संबंधी विचार 'अख्यातिवाद' तथा कुमारिल का भ्रम संबंधी विचार 'विपरीत ख्यातिवाद' के नाम से जाना जाता है।

प्रभाकर का भ्रम-संबंधी विचार :→

प्रभाकर के मतानुसार ज्ञान मात्र ही यथार्थ होता है। भ्रम तो मात्र अज्ञान है। भ्रम को ज्ञान नहीं, वरन् अज्ञान रूप माना जाता है। सिप्पी का चाँदी रूप में चाँदी का अज्ञान ही अख्याति है। इसीकारण प्रभाकर मीमांसा का भ्रम-संबंधी विचार को 'अख्यातिवाद' की संज्ञा दी जाती है। इन्होंने भ्रम को non-apprehension के रूप में स्वीकार किया है अर्थात् भ्रम का अर्थ नहीं देखना। यद्यपि ये स्वतः प्रामाण्यवाद में विश्वास करते हैं। फलस्वरूप तार्किक अर्थ में भ्रम को नहीं मानते हैं। इन्होंने अपूर्ण तथा आंशिक ज्ञान को ही भ्रम कहा है। इनके अनुसार प्रत्येक ज्ञान अपने आप में यथार्थ होता है, लेकिन प्रत्येक ज्ञान अपने आप में पूर्ण नहीं होता है। अपूर्ण ज्ञान ही भ्रम है। जब तक हम भ्रम की अवस्था में रहते हैं, तब तक अपूर्ण ज्ञान को ही सत्य मान लिया जाता है। इसतरह भ्रम और सत्यता के बीच कोई तार्किक भेद नहीं है।

प्रभाकर ने स्वीकार किया है, कि भ्रम में दो तत्त्व निहित होते हैं — (i) भावात्मक (ii) निषेधात्मक। भावात्मक तत्त्व दो प्रकार के Cognitions की उपस्थिति में निहित है जो अपने विषय को आंशिक रूप से व्यक्त करता है। निषेधात्मक तत्त्व इन दो प्रकार के Cognitions तथा उनके विषयों के बीच अन्तर नहीं जानने में निहित है। ये दोनों प्रकार के Cognitions या तो Presentive या दोनों Representative हो सकता है, या एक Presentative हो सकता है तथा दूसरा Representative। अगर दोनों ही Cognitions, Presentative हो तो भ्रम का कारण है, non-discrimination (भेद करना) non-discrimination between Perception and non-perception. अगर दोनों ही प्रकार के Cognitions Representative हो तो भ्रम का कारण है non-discrimination between memory and memory. अगर एक Cognitions Presentative हो और दूसरा Representative होतो भ्रम का कारण है, non-discrimination between Perception and memory. लेकिन प्रत्येक दशा

Scanned with CamScanner

में भ्रम का कारण non-discrimination है या non-apprehension है जिसका अर्थ है कि दो प्रकार के ज्ञान तथा उसके विषयों के भेद नहीं जानना। इसे ही 'अख्याति' कहा जाता है। प्रभाकर भ्रम के सत्ता को नहीं स्वीकार करते। यह तो केवल अज्ञान रूप है। अनुभव और स्मृति में हम भेद नहीं करते। अतः भ्रम की प्रतीति होती है। अतः भ्रम का कारण विवेकाग्रह या भेद ज्ञान का अभाव है। जब हमें भेद ज्ञान हो जाता है तो स्पष्ट रूप से सिप्पी का अनुभव होने लगता है तथा चाँदी का ज्ञान समाप्त हो जाता है। अतः अनुभव या ज्ञान की सत्ता है, भ्रम का नहीं। प्रभाकर के 'अख्यातिवाद' को दूसरा नाम 'विवेकाख्याति' 'भेदाग्रह' आदि भी है।

कुमारिल का भ्रम-संबंधी विचार →

कुमारिल के अनुसार भ्रम ज्ञान विपरीत ज्ञान है। भ्रम के अवस्था में हमें विषय का विपरीत अनुभव होता है। जैसे- रस्सी का सर्प के रूप में अनुभव विपरीत रूप में ख्याति है। इसलिए कुमारिल के भ्रम संबंधी विचार को 'विपरीत-ख्यातिवाद' की संज्ञा दी जाती है। यद्यपि प्रभाकर के तरह इन्होंने भी ~~स्वतः प्रामाण्यवाद~~ में विश्वास किया है। लेकिन प्रभाकर भ्रम तथा ~~[illegible]~~ के बीच तार्किक भेद को नहीं मानते हैं। वहाँ कुमारिल ~~[illegible]~~ दोनों के बीच तार्किक भेद को स्वीकार किया है। ~~इनके अनुसार~~ भ्रम अपूर्ण तथा आंशिक नहीं है, बल्कि भ्रम गलत ज्ञान है। भ्रम की अवस्था में हम किसी पदार्थ का ज्ञान, उस पदार्थ के रूप में नहीं बल्कि दूसरे पदार्थ के रूप में प्राप्त करते हैं। इसप्रकार भ्रम non-apprehension नहीं, बल्कि Mis-apprehension है। यही कारण है कि इनके विचार को 'विपरीत ख्याति' की संज्ञा दी गई है। उदाहरण-स्वरूप- किसी सिप्पी को देखकर यह ज्ञान प्राप्त करना कि वह चाँदी है, भ्रम कहलायेगा। विश्लेषण करने पर पता चलता है कि इसमें सिप्पी और चाँदी दोनों अपने जगह पर सत्य ज्ञान है। परन्तु सिप्पी का चाँदी रूप में ज्ञान असत्य है। अतः भ्रम तो सिप्पी और चाँदी के संसर्ग से उत्पन्न होता है। इन-दोनों के संसर्ग या संबंध नेत्र-दोष के कारण होता है, नेत्र-दोष के कारण सिप्पी और चाँदी में संसर्ग जोड़ देते हैं। फलतः हम कहते हैं कि सिप्पी चाँदी है। सिप्पी और चाँदी अपने-अपने स्थान पर यथार्थ है परन्तु नेत्र-दोष से उत्पन्न दोनों का संसर्ग अयथार्थ है।

अब प्रश्न उठता है कि दोनों का संसर्ग क्या होता है? भ्रम का कारण सिप्पी और चाँदी में कुछ गुणों जैसे- उजलापन, चमकीलापन आदि गुणों की समानता है। फलस्वरूप किसी सिप्पी को देखकर और चाँदी के कुछ गुणों को उसमें वर्तमान पाकर हम यह ज्ञान प्राप्त करते हैं कि सिप्पी चाँदी है। यहाँ उपस्थित पदार्थ और स्मृति में लाये गये पदार्थ के बीच गलत ढंग से समन्वय है। फलस्वरूप हम उस पदार्थ या ज्ञान दूसरे पदार्थ के रूप में प्राप्त करते हैं। अतः भ्रम का कारण 'सादृश्य प्रतीति' या 'संदोष नेत्र' दोनों हैं।

यद्यपि कुमारिल एक वस्तुवादी दार्शनिक हैं, लेकिन फिर भी इन्होंने भ्रम की अवस्था में आत्मनिष्ठ तत्त्व को निहित मानकर आंशिक रूप से अपने वस्तुवादी विचार का परित्याग किया है। भ्रम की अवस्था में दो पदार्थों के बीच गलत समन्वय होता है और यह समन्वय ज्ञाता के द्वारा होता है। जिसमें प्रमाणित होता है कि भ्रम की अवस्था में आत्मनिष्ठ तत्त्व निहित है।

प्रभाकर और कुमारिल के अनुसार भ्रम संबंधी व्याख्या के अनुसार दोनों का तुलनात्मक अध्ययन करना आवश्यक जान पड़ता है :->

1. प्रभाकर के अनुसार भ्रम विवेक का अभाव या अख्याति है और कुमारिल के अनुसार भ्रम 'विपरीत ख्याति' है। भ्रम के अवस्था में हमें वस्तु का विपरीत ज्ञान होता है। इसलिए प्रभाकर के भ्रम को non-apprehension के रूप में स्वीकार किया जाता है, जबकि कुमारिल के भ्रम को Mis-apprehension के रूप में स्वीकार किया जाता है।

2. प्रभाकर भ्रम और सत्यता के बीच तार्किक भेद को स्वीकार नहीं करते, जबकि कुमारिल भ्रम तथा सत्यता के बीच तार्किक भेद को स्वीकार किया है। क्योंकि कुमारिल के अनुसार भ्रम अपूर्ण तथा आंशिक नहीं बल्कि भ्रम गलत ज्ञान है।

3. प्रभाकर के अनुसार भ्रम का कारण विवेक का अभाव है जबकि कुमारिल के अनुसार भ्रम का कारण उद्देश्य और विधेय का संसर्ग है।

4. कारण के ठीक विपरीत निवारण होता है। प्रभाकर के अनुसार विवेक के उत्पन्न होने पर विवेक का अभाव नष्ट हो जाता है, भ्रम समाप्त हो जाता है। अख्याति ख्याति बन जाता है। जबकि कुमारिल के अनुसार जब हमें उद्देश्य और विधेय में संसर्ग का अभाव का ज्ञान हो जाता है, तो भ्रम समाप्त हो जाता है।

5. कुमारिल का भ्रम सिद्धान्त न्याय के निकट है, परन्तु

प्रभाकर का बहुत दूर। न्याय के अनुसार भ्रम तो 'अन्यथा अनुभव' है। हम सिप्पी को देखकर चाँदी का अनुभव करते हैं। यह सिप्पी का अन्यथा अनुभव है। इसी अन्यथा अनुभव को कुमारिल ने विपरीत अनुभव कहा है। न्याय तथा कुमारिल दोनों भ्रम को एक प्रकार का अनुभव मानते हैं। लेकिन प्रभाकर इसे अनुभव का अभाव करते हैं।

6. प्रभाकर के अनुसार भ्रम अभावात्मक है, जबकि कुमारिल के अनुसार भ्रम भावात्मक है। क्योंकि प्रभाकर का मत व्यवहार का निषेध करता है। परन्तु कुमारिल का नहीं। प्रभाकर भ्रम के सत्ता को नहीं मानते हैं। भ्रम के अवस्था में हम कार्य करते हैं। रस्सी को साँप समझकर दौड़ने लगते हैं। सिप्पी को चाँदी समझकर उसे पकड़ने की चेष्टा करते हैं। प्रयास और चेष्टा की व्याख्या के कारण भावात्मक मानना उचित है। अतः प्रभाकर के अपेक्षा कुमारिल और न्याय का मत दैनिक जीवन के व्यवहार को बढ़ावा देता है।

उपर्युक्त विवेचना के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रभाकर का भ्रम-संबंधी विचार 'अख्यातिवाद' है जिसके अनुसार भ्रम का अर्थ है, non-apprehension तथा कुमारिल का भ्रम संबंधी विचार 'विपरीत ख्यातिवाद' है जिसके भ्रम का अर्थ है Mis-apprehension. लेकिन शंकराचार्य ने भ्रम को न तो non-apprehension के रूप में स्वीकार किया है, न Mis-apprehension के रूप में, बल्कि इन्होंने भ्रम को अनिर्वचनीय कहा है। यही कारण है कि भ्रम-संबंधी विचार 'अनिर्वचनीय ख्याति' के नाम से जाना जाता है।

Scanned with CamScanner